प्रकाशनार्थ अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर
(युगल पीठ)

कोरम - माननीय मुख्य न्यायमूर्ति श्री एस.आर. नायक
माननीय न्यायमूर्ति श्री वी.के. श्रीवास्तव

रिट याचिका क्रमांक - 2805/2003

याचिकाकर्ता : आर.के. विज, आईपीएस, आत्मज स्व. के.आर. विज, आयु लगभग 42 वर्ष, वर्तमान में अतिरिक्त परिवहन आयुक्त एवं विशेष सचिव, गृह विभाग (परिवहन) छत्तीसगढ़ शासन, रायपुर (छ.ग.) के पद पर पदस्थ

बनाम

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

उत्तरवादी :

1. भारत संघ द्वारा सचिव, गृह मंत्रालय, नई दिल्ली
2. मध्य प्रदेश राज्य द्वारा प्रमुख सचिव, गृह विभाग, मंत्रालय, वल्लभ भवन, भोपाल (म.प्र.)
3. छत्तीसगढ़ राज्य द्वारा प्रमुख सचिव, गृह विभाग, मंत्रालय, डी.के.एस भवन, रायपुर (छ.ग.)
4. एस.पी. पांडे, आईपीएस
5. एस इब्राहिम, आईपीएस
6. ए.के. धस्माना, आईपीएस
7. विजय कुमार सिंह, आईपीएस
8. राजेंद्र कुमार, आईपीएस
9. डॉ. एस.के. श्रीवास्तव, आईपीएस
10. संजीव कुमार सिंह, आईपीएस
11. सुशोवन बनर्जी, आईपीएस
12. सुश्री ए. शंकर, आईपीएस
13. पी.के. श्रीवास्तव, आईपीएस
14. रवि कुमार गुप्ता, आईपीएस
15. राजा बाबू सिंह. आईपीएस
16. के. वैफेई, आईपीएस
17. डी.सी. सागर, आईपीएस
18. डी. शाहिद अबरार, आईपीएस

उत्तरवादी क्रमांक 4 से 18 हेतु पुलिस महानिदेशक, मध्य

प्रदेश, पुलिस मुख्यालय, भोपाल (मध्य प्रदेश)

19. विश्वरंजन, आईपीएस
20. ओ.पी. राठौड़, आईपीएस
21. प्रवीण महेंद्रू, आईपीएस
22. अनिल एम. नवाने, आईपीएस
23. राम निवास, आईपीएस
24. एम.डब्ल्यू. अंसारी, आईपीएस
25. एक। उपाध्याय, आईपीएस
26. डी.एम. -अवस्थी, आईपीएस
27. बिनय कुमार सिंह, आईपीएस
28. अशोक जुनेजा, आईपीएस
29. अरुणदेव गौतम, आईपीएस
30. गुरजिंदर पाल सिंह, आईपीएस
31. टी.जे. लांग कुमान आईपीएस
32. विवेकानन्द, आईपीएस

उत्तरवादी क्रमांक 19 से 32 हेतु पुलिस महानिदेशक, छत्तीसगढ़, पुलिस मुख्यालय, रायपुर (छ.ग.)

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

उपस्थित –

याचिकाकर्ता हेतु	:	श्री मनिन्द्र श्रीवास्तव, वरिष्ठ अधिवक्ता सहित श्री अखिलेश दलपति, विद्वान अधिवक्ता
उत्तरवादी क्रमांक 1 केन्द्र सरकार हेतु	:	श्री एस.के. बेरीवाल, अधिवक्ता
उत्तरवादी क्रमांक 2, मध्य प्रदेश राज्य हेतु	:	श्री सचिन सिंह राजपूत, अधिवक्ता
छत्तीसगढ़ राज्य हेतु	:	श्री प्रशांत मिश्रा, अतिरिक्त महाधिवक्ता सहित श्री उत्कर्ष वर्मा, उप-शासकीय अधिवक्ता
उत्तरवादी क्रमांक 15 हेतु	:	श्री समीर साहू सहित श्री अशोक वैष्णव, अधिवक्ता
उत्तरवादी क्रमांक 17 हेतु	:	श्री भास्कर प्यासी, अधिवक्ता
उत्तरवादी क्रमांक 22, 23, 26 एवं 28 हेतु	:	श्रीमती फौजिया मिर्जा, अधिवक्ता
उत्तरवादी क्रमांक 24, 25, 29 एवं 30 हेतु	:	श्री राजेन्द्र त्रिपाठी, अधिवक्ता
अन्य उत्तरवादीगण हेतु	:	कोई उपस्थित नहीं

मौखिक आदेश
(28 अगस्त, 2006 को पारित)

न्यायालय का निम्नलिखित मौखिक आदेश माननीय **मुख्य न्यायाधीश एस.आर. नायक**, द्वारा पारित किया गया :-

याचिकाकर्ता भारतीय पुलिस सेवा से संबंधित है। छत्तीसगढ़ के नए राज्य के गठन से पहले, उसे अविभाजित मध्य प्रदेश राज्य में आबंटित किया गया था। छत्तीसगढ़ के नए राज्य के गठन के बाद,

याचिकाकर्ता को आदेश दिनांक 31/10/2000 एवं 06/11/2000 के अनुसार छत्तीसगढ़ राज्य में भारतीय पुलिस सेवा के कैडर में आबंटित किया गया एवं इस कारणवश याचिकाकर्ता द्वारा उसे मध्य प्रदेश राज्य में बनाए रखने हेतु उसके अनेक अभ्यावेदन आवेदन व्यर्थ हो गए। भारत सरकार की उक्त कार्यवाही से व्यथित होकर याचिकाकर्ता द्वारा केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण (संक्षेप में, "अधिकरण"), नई दिल्ली स्थित मुख्य पीठ के समक्ष ओ.ए. क्रमांक 2421/2001 दायर किया गया। जब यह ओ.ए. क्रमांक 2421/2001 अधिकरण, नई दिल्ली स्थित प्रधान पीठ के समक्ष विचारण हेतु आया, तो यह कहा गया कि भारत सरकार द्वारा अधिकरण के समक्ष इस मंशा का अभ्यावेदन दिया गया था कि वह याचिकाकर्ता और समान परिस्थितियों वाले अन्य आईपीएस अधिकारियों के अभ्यावेदनों पर विचार करेगी। भारत सरकार द्वारा दिए गए इस वचन पत्र के दृष्टिकोण में, अधिकरण आदेश दिनांक 05/02/2002 (अनुलग्नक पी/3) द्वारा ओ.ए. क्रमांक 2421/2001 का निस्तारण कर भारत सरकार को याचिकाकर्ता और समान परिस्थितियों वाले अन्य आईपीएस अधिकारियों के अभ्यावेदनों पर यथाशीघ्र और किसी भी स्थिति में इस आदेश की प्रति प्राप्त होने की तारीख से तीन महीने की अवधि के भीतर निर्णय लेने का निर्देश दिया गया था। ऐसा प्रतीत होता है कि भारत सरकार ने अधिकरण द्वारा तय समय-सीमा के भीतर कोई निर्णय नहीं लिया। हालाँकि, विलम्ब से, भारत सरकार द्वारा आदेश दिनांक 16/06/2005 और 27/06/2005 के माध्यम से याचिकाकर्ता को मध्य प्रदेश राज्य में आबंटित करने के अभ्यावेदन को खारिज कर दिया गया।

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

2. इस बीच, दिनांक 01/09/2003 को यह रिट याचिका दायर की गई थी जिसके अधीन भारत सरकार को यह निर्देश दिया गया था कि वे अधिकरण के निर्देशानुसार याचिकाकर्ता के अभ्यावेदन का निराकरण करे। भारत सरकार द्वारा याचिकाकर्ता के खिलाफ आदेश दिनांक 16/06/2005 और 27/06/2005 पारित करने उपरांत, याचिकाकर्ता द्वारा रिट याचिका में संशोधन के लिए एक आवेदन आई.ए. क्रमांक 7142/2005 पेश कर भारत सरकार के उपरोक्त आदेशों की वैधता पर आक्षेप किया गया। इस आवेदन का विरोध करते हुए, भारत सरकार की ओर से, अन्य आपत्तियों के अलावा यह तर्क प्रस्तुत किया गया कि याचिकाकर्ता को भारत सरकार के आदेश दिनांक 16/06/2005 एवं 27/06/2005 के खिलाफ अधिकरण के समक्ष वैकल्पिक उपाय का उपयोग किए बिना भारत के संविधान के अनुच्छेद

226 के अधीन इस न्यायालय के समक्ष सीधे चुनौती नहीं की जा सकती है। इस तर्क के समर्थन में भारत सरकार ने सर्वोच्च न्यायालय के **एल. चन्द्र कुमार बनाम भारत संघ** [1] में पारित निर्णय के कंडिका कंडिका 99 पर भरोसा किया है।

3. दूसरी ओर, याचिकाकर्ता की ओर से यह तर्क दिया गया कि चूंकि याचिकाकर्ता ने पहले भी अधिकरण के समक्ष ओ.ए. क्रमांक 2421/2001 दायर किया था और भारत सरकार द्वारा स्वयं को सही न करते हुए याचिकाकर्ता के विरूद्ध पुनः प्रतिकूल आदेश पारित किया गया, अतः यह न्यायालय उन आदेशों की वैधता की समीक्षा कर सकता है। इस तर्क के समर्थन में, याचिकाकर्ता ने सर्वोच्च न्यायालय के **टी.के. रंगराजन बनाम तमिलनाडु सरकार एवं अन्य** [2] में पारित निर्णय पर भरोसा किया है। इन तर्कों के आधार पर, न्यायालय से एकमात्र इस प्रश्न पर विचरण हेतु प्रार्थना की गयी है कि याचिकाकर्ता द्वारा मांगे गए संशोधन को अनुमति दी जानी चाहिए या नहीं। इस न्यायालय द्वारा आदेश दिनांक 09/08/2005 द्वारा संशोधन हेतु आवेदन को अनुमति दी गयी।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

4. याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री मनिन्द्र श्रीवास्तव, भारत संघ के विद्वान अधिवक्ता श्री एस.के. बेरीवाल तथा छत्तीसगढ़ राज्य के विद्वान राज्य अधिवक्ता को सुनने उपरांत, हम इस सुविचारित राय पर पहुंचते हैं कि इस तरह के मामलों में, यदि न्यायालय अधिकरण के समक्ष वैकल्पिक उपचार का प्रयोग करे बिना इस दायर रिट याचिका पर विचार करता है तो यह न्यायालय द्वारा एक गलत उदहारण उल्लिखित करने के समान होगा, जो समुचित या समीचीन नहीं होगा।

5. जैसा कि हमने **धनेश्वर देवांगन बनाम छत्तीसगढ़ राज्य व अन्य** [3] के नवीनतम निर्णय में अभिनिर्धारित किया है कि कभी-कभी न्यायालय के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि वह संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत न्यायालय को प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए स्व-निर्धारित प्रतिबंधों और

[1] (1997) 3 एससीसी 261
[2] (2003) 6 एससीसी 581
[3] 2006 (1) सीजीएलजे 221

सीमाओं के विषयों को खुद को याद दिलाए। न्यायालय इस तथ्य की न्यायिक अवेक्षा कर सकता है कि इस न्यायालय में बड़ी संख्या में रिट याचिकाएं ऐसे व्यक्तियों द्वारा दायर की जाती हैं जिनके पास वैधानिक वैकल्पिक उपचार या अन्य प्रभावी और पर्याप्त उपचार उपलब्ध नहीं होते हैं। संविधान का अनुच्छेद 226 उच्च न्यायालयों को बंदी प्रत्यक्षीकरण, परमादेश, निषेध, अधिकार पृच्छा और उत्प्रेषण या इनमें से किसी भी प्रकृति के निर्देश, आदेश या रिट जारी करने का अधिकार देता है। ऐसे निर्देश, आदेश या रिट मौलिक अधिकारों के प्रवर्तन या किसी अन्य उद्देश्य हेतु जारी किए जा सकते हैं। यह बताने की आवश्यकता नहीं है कि संविधान के अनुच्छेद 226 में प्रदत्त उपचार एक विवेकाधीन उपचार है और उच्च न्यायालय को हमेशा यह विवेकाधिकार होता है कि वह किन्हीं परिस्थितियों में आवेदक को राहत देने से इंकार कर सकता है, भले ही, उसके विधिक अधिकार का हनन हुआ हो। वैकल्पिक उपाय की उपलब्धता ऐसे विचारों में से एक है जिसे उच्च न्यायालय अपने अधिकारिता का इस्तेमाल करने से इंकार करने हेतु ध्यान में रख सकता है। यह सत्य है कि **मोहम्मद यासीन बनाम नगर क्षेत्र समिति** [4] और पश्चातवर्ती पारित निर्णयों में सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि वैकल्पिक उपाय का अस्तित्व में होना किसी मौलिक अधिकार को लागू करने हेतु उच्च न्यायालय में रिट याचिका दायर करने पर अवरोध नहीं है। यह एकमात्र अपवाद है। अन्य सभी मामलों में जहां कोई मौलिक अधिकार शामिल नहीं है, यह निर्णय दिया गया है कि उच्च न्यायालय अनुच्छेद 226 के तहत अपने अधिकारिता का प्रयोग नहीं करेगा जहां एक वैकल्पिक, पर्याप्त और प्रभावकारी विधिक उपचार उपलब्ध है और याचिकाकर्ता ने उच्च न्यायालय आने से पहले इसका लाभ नहीं उठाया है। अपितु अनुच्छेद 226 इस मामले में मौन है एवं इतने शब्दों में कुछ नहीं कहता है, परन्तु न्यायालयों ने स्वतः इस नियम को अनुच्छेद 226 के अधीन अपनी अधिकारिता पर एक तरह के स्व-निर्धारित प्रतिबंध के रूप में विकसित किया है। अनुच्छेद 226 के अधीन अधिकारिता के उपयोग से पूर्व वैकल्पिक उपचारों के उपयोग की अनिवार्यता का नियम, एक विधि के नियम के स्थान पर नीति, सुविधा और विवेक का नियम माना गया है। उपर्युक्त नियम को इस आधार पर उचित ठहराया गया है कि व्यक्तियों को ऐसे वैधानिक प्रावधानों की अनदेखी करने के लिए प्रोत्साहित नहीं किया जाना चाहिए, जो किसी प्रशासनिक या अर्ध-न्यायिक कार्रवाई को चुनौती देने हेतु तंत्र और प्रक्रिया उपलब्ध कराते हैं।

[4] एआईआर 1952 एससी 115

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

6. हम न्याय दृष्टान्त के संदर्भ में अपनी राय पर बोझ नहीं डालना चाहते। यह कहना पर्याप्त होगा कि इस न्यायालय के उपरोक्त निर्णय में कंडिका 5 से 10 में जो कुछ कहा गया है, वह इस मामले के संदर्भ में भी पूर्णतः उपयुक्त है, और वे निम्नानुसार उद्धृत किए जाते हैं :-

"5. **भारत संघ बनाम टी.आर. वर्मा** [5] में, सर्वोच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि :

"यह सुस्थापित है कि जब किसी वादी को कोई वैकल्पिक और समान रूप से प्रभावी उपचार उपलब्ध हो, तो उसे उस उपचार का अनुसरण करने की अपेक्षा की जाती है न कि उच्च न्यायालय के विशेषाधिकार रिट जारी करने हेतु विशेष अधिकारिता का आह्वान नहीं करना चाहिए। यह सत्य है कि किसी अन्य उपचार की उपलब्धता से न्यायालय का रिट जारी करने की अधिकारिता प्रभावित नहीं होती; परंतु... "रिट जारी करने के विषय में विचार करते समय पर्याप्त विधिक उपचार की उपलब्धता एक महत्वपूर्ण विचारणीय विषय होता है..." "और जब ऐसा उपचार उपलब्ध हो तो अनुच्छेद 226 के अधीन याचिका में हस्तक्षेप करने से इंकार करना विवेक का उचित प्रयोग होगा, जब तक कि उसके विरुद्ध ठोस आधार न हों।"

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

*6. **थानसिंह बनाम कर अधीक्षक** [6] के मामले में, उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि :*

"संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन उच्च न्यायालय की अधिकारिता व्यापक शब्दों में व्यक्त की गयी है और इसके प्रयोग पर कोई प्रतिबंध नहीं है सिवाय उन क्षेत्रीय प्रतिबंधों के जो अनुच्छेदों में उल्लिखित हैं। परंतु इस अधिकारिता का प्रयोग विवेकाधीन है; इसका प्रयोग केवल इस कारण से नहीं किया जाता कि ऐसा करना विधिसम्मत है। अधिकारिता की यही विशालता अपेक्षा करती है कि इसका प्रयोग सामान्यतः कुछ स्व-निर्धारित सीमाओं के अधीन किया जाए। इस अधिकारिता का प्रयोग उस राहत के वैकल्पिक उपाय के रूप में नहीं किया जाना चाहिए जिसे किसी वाद या विधिक प्रक्रिया द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। सामान्यतः न्यायालय तब अनुच्छेद 226 के

[5] एआईआर 1957 एससी 882
[6] एआईआर 1964 एससी 1419

अधीन रिट याचिका पर विचार नहीं करेगा जब याचिकाकर्ता के पास कोई वैकल्पिक उपाय उपलब्ध हो, जो बिना अत्यधिक कठिनाई के समान रूप से प्रभावी हो। पुनः, उच्च न्यायालय सामान्यतः उन प्रश्नों का निर्धारण नहीं करता जिनके लिए साक्ष्य के विस्तृत परीक्षण की आवश्यकता होती है ताकि उस अधिकार की स्थापना की जा सके, जिसका प्रवर्तन रिट द्वारा किया जाना है। अतः उच्च न्यायालय किसी न्यायालय या अधिकरण के निर्णय के विरुद्ध तथ्यों की त्रुटियों को सुधारने हेतु अपील न्यायालय के रूप में कार्य नहीं करता और अनुच्छेद 226 के अधीन अधिकारिता ग्रहण कर उस वैकल्पिक उपाय में हस्तक्षेप नहीं करता जो विधि द्वारा प्रदान किया गया है। जब किसी व्यथित याचिकाकर्ता के लिए किसी अन्य अधिकरण में, या उसी न्यायालय के किसी अन्य अधिकारिता में, उस विधिक प्रक्रिया के अनुसार राहत प्राप्त करना संभव हो जो विधि द्वारा स्थापित की गई है, तो सामान्यतः उच्च न्यायालय संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन याचिका स्वीकार कर उस विधिक प्रक्रिया को दरकिनार करने की अनुमति नहीं देगा और याचिकाकर्ता को उस विधिक प्रक्रिया का अनुसरण करने की अनुमति देगा, जिसे स्थापित किया गया है।"

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

7. **सहायक आयुक्त, केंद्रीय उत्पाद शुल्क बनाम डनलप इंडिया लिमिटेड** [7] में, उच्चतम न्यायालय ने कंडिका 3 में यह अभिनिर्धारित किया है कि :

"अनुच्छेद 226 का उद्देश्य वैधानिक प्रक्रियाओं को छोटा करना या उन्हें चकमा देना नहीं है। केवल उन्हीं असाधारण परिस्थितियों में जब वैधानिक उपचार पूरी तरह अनुपयुक्त हों, जैसे कि जब स्वयं विधि की वैधता प्रश्न में हो या जब निजी और सार्वजनिक हानि इतनी घुल-मिल गई हो और जनहित की क्षति को रोकने और न्याय की स्थापना हेतु अनुच्छेद 226 का आह्वान आवश्यक हो, तभी इस अनुच्छेद का प्रयोग किया जा सकता है। परंतु तब भी न्यायालय के पास ठोस और पर्याप्त कारण होने चाहिए जिससे वह विधिक रूप से उपलब्ध वैकल्पिक उपाय को दरकिनार कर सके। निस्संदेह, राजस्व संबंधी मामलों में जहाँ वैधानिक उपचार उपलब्ध हैं, ऐसे

[7] एआईआर 1985 एससी 330

मामलों में यह अपवाद लागू नहीं होता। हम इस तथ्य का भी न्यायिक अवेक्षा कर सकते हैं कि संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन दायर अधिकांश याचिकाएँ केवल अंतरिम आदेश प्राप्त करने के उद्देश्य से दायर की जाती हैं और तत्पश्चात कार्यवाही को किसी न किसी माध्यम से विलंबित किया जाता है। इस प्रवृत्ति को निश्चित रूप से दृढ़ता से हतोत्साहित किया जाना चाहिए।"

8. इसके अतिरिक्त, उच्चतम न्यायालय के निम्न निर्णय, उत्तर प्रदेश जल निगम बनाम नरेश्वर जो कि (1995) 1 एससी 21 में प्रकाशित है, टी.पी. मोहपात्रा बनाम उड़ीसा राज्य जो कि एआईआर 1983 एसी 603 में प्रकाशित है, तथा एच.बी. गांधी बनाम गोपीनाथ एंड संस जो कि 1992 सप्प. (2) एससी 312 में प्रकाशित है, से यह निष्कर्ष निकलता है कि जब वैधानिक उपचार उपलब्ध हों या कोई वैधानिक अधिकरण स्थापित किया गया हो, तो अनुच्छेद 226 के अधीन दायर याचिका पर विचार नहीं किया जाना चाहिए, जब तक कि वह वैधानिक उपाय किसी असाधारण परिस्थिति की आवश्यकताओं की पूर्ति करने में अक्षम न हो। उदाहरणतः, जहां स्वयं अधिनियम की वैधता ही प्रश्नगत हो; या जहां निजी और सार्वजनिक हानियां इतनी घुल-मिल गई हों कि जनहित की क्षति को रोकने एवं न्याय की स्थापना हेतु अनुच्छेद 226 का सहारा लेना आवश्यक हो; या जहां वैकल्पिक उपाय प्रभावी या पर्याप्त न हो; या वह उपचार अत्यधिक बोझिल, कठिन, अनुपयुक्त या भ्रामक हो; या जहां उसमें अत्यधिक विलंब हो; या जहां आक्षेपित कार्यवाही स्पष्टतः त्रुटिपूर्ण हो अथवा अधिकार क्षेत्र की जड़ में दोष हो; या जहां संबंधित प्राधिकरण के पास पूर्ण रूप से अधिकार का अभाव हो।

9. इस सिद्धांत के पीछे कुछ ठोस कारण हैं। अनुच्छेद 226 के अधीन न्यायिक पुनर्विलोकन के रूप में उपलब्ध उपचार अन्य उपचारों से मौलिक रूप से भिन्न होते हैं। जहां अपील की स्थिति में कोई न्यायालय किसी अन्य निकाय के निर्णय के स्थान पर स्वयं का निर्णय प्रतिस्थापित करता है, वहीं अनुच्छेद 226 के अधीन पुनर्विलोकन करते समय उच्च न्यायालय केवल इस प्रश्न पर विचार करता है कि क्या जिस अधिनियम या आदेश को चुनौती दी गई है, उसे यथावत रहने

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

दिया जाए या नहीं। न्यायालयों द्वारा बार-बार यह बल दिया गया है कि न्यायिक पुनर्विलोकन किसी निर्णय के विरुद्ध नहीं होता, बल्कि निर्णय-ग्रहण प्रक्रिया के विरुद्ध होता है। एच.बी. गांधी बनाम गोपीनाथ एंड संस (पूर्वोक्त) के कंडिका 8 में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि :

"यह सत्य है कि न्यायिक पुनर्विलोकन निर्णय के विरुद्ध नहीं बल्कि निर्णय-ग्रहण प्रक्रिया तक सीमित होता है। न्यायिक पुनर्विलोकन उस निर्णय की सत्यता या तर्कसंगतता की वस्तुपरक परीक्षा तक नहीं जा सकता। न्यायिक पुनर्विलोकन का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि किसी व्यक्ति के साथ निष्पक्ष व्यवहार किया गया हो, न कि यह सुनिश्चित करना कि संबंधित प्राधिकरण, जिसने निष्पक्ष अवसर प्रदान किया, उसने विधि द्वारा स्वीकृत विषय पर कोई ऐसा निष्कर्ष निकाला जो विधि की दृष्टि में 'सही' हो। न्यायिक पुनर्विलोकन, निर्णय से अपील नहीं है, बल्कि यह उस प्रक्रिया की समीक्षा है जिससे निर्णय लिया गया। यह मान लेना त्रुटिपूर्ण होगा कि न्यायालय न केवल निर्णय-ग्रहण प्रक्रिया की सत्यता पर, बल्कि उस निर्णय की सत्यता पर भी निर्णय देता है।"

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

10. एच.डब्ल्यू.आर. वेड ने अपनी प्रसिद्ध कृति एडमिनिस्ट्रेटिव लॉ (छठा संस्करण) के पृष्ठ 36 पर लिखा है :

"न्यायिक पुनर्विलोकन की प्रणाली अपील की प्रणाली से मौलिक रूप से भिन्न है। जब न्यायालय किसी अपील की सुनवाई करता है, तब वह उस निर्णय की गुण-दोष के आधार पर समीक्षा करता है, जिसकी अपील की गई है। किंतु जब कोई प्रशासनिक कार्रवाई या आदेश न्यायिक पुनर्विलोकन की व्याख्या पर परखा जाता है, तब न्यायालय उसकी वैधता की समीक्षा करता है। अपील में प्रश्न होता है — 'सही या गलत?' पुनर्विलोकन में प्रश्न होता है — 'वैध या अवैध?'"

7. सर्वोपरि, यह उल्लेख करना आवश्यक है कि इस प्रश्न का निर्णय करते समय कि क्या पक्षकारों को इस न्यायालय के समक्ष सीधे आने की अनुमति दी जानी चाहिए बिना वैकल्पिक उपचारों का प्रयोग करे, वर्तमान समय और परिस्थिति के संदर्भ में न्यायालय को इस निर्विवाद तथ्य को ध्यान में रखना चाहिए कि कुछ ऐसे अधिकारिता हैं जिन्हें केवल यह न्यायालय ही प्रयोग कर सकता है, कोई अन्य न्यायालय या न्यायिक या अर्ध-न्यायिक मंच नहीं। इस न्यायालय में मामलों की लंबित संख्या अत्यंत गंभीर है। यह न्यायालय बड़ी संख्या में अत्यंत पुराने मामलों की सुनवाई और निपटान करने की स्थिति में नहीं है, और वादीगण वर्षों और दशकों तक न्यायालय के द्वार खटखटाते न्याय की आशा में विवश रहते हैं। यदि न्यायालय यह पाता है कि रिट याचिकाकर्ता के पास किसी अधिकरण, न्यायालय, व्यवहार न्यायालय या अन्यथा कोई वैकल्पिक, प्रभावी और पर्याप्त उपचार उपलब्ध है, तो संविधान के अनुच्छेद *226* के अधीन इस न्यायालय द्वारा उस याचिका को सुनना और स्वीकार करना उचित नहीं होगा, जो बिना वैकल्पिक उपचारों का उपयोग किए सीधे दायर की गई हो। इस दृष्टिकोण से और समय एवं परिस्थिति की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए, हम यह अभिनिर्धारित करने हेतु स्वयं को उचित नहीं पाते कि इस याचिका को, जो वैकल्पिक उपचारों का प्रयोग करे बिना सीधे दायर की गई है, स्वीकार किया जाए।

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

8. उपर्युक्त सिद्धांतों के आलोक में, अब हम इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत विवाद पर दृष्टिपात करें और यह निर्णय लें कि क्या रिट याचिकाकर्ता के पास किसी न्यायालय, अधिकरण या अन्य न्यायिक मंच के समक्ष प्रभावी एवं पर्याप्त वैकल्पिक उपाय उपलब्ध है या नहीं। यह निर्विवाद है कि प्रशासनिक अधिकरण अधिनियम, 1985 (संक्षेप में, "अधिनियम") के अधीन गठित अधिकरण को न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत विवाद के निर्णय का अधिकार और अधिकारिता प्राप्त है। विवाद साधारण है। प्रश्न यह है कि नए राज्य मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ के गठन उपरांत, याचिकाकर्ता जो अविभाजित मध्य प्रदेश राज्य के संवर्ग में भारतीय पुलिस सेवा अधिकारी के रूप में कार्यरत था, उसे नए मध्य प्रदेश राज्य में रखा जाना चाहिए या नए छत्तीसगढ़ राज्य में। दूसरा कि, यह नहीं कहा जा सकता कि अधिकरण ने याचिकाकर्ता के दावे को समझने और निर्णय देने में कोई स्पष्ट त्रुटि या गलत आकलन किया हो। जैसा कि पूर्व में उल्लेखित किया गया है, पहले के अवसर पर अधिकरण ने भारत सरकार द्वारा दिए गए वचन पत्र के

आलोक में केवल यह निर्देश दिया था कि भारत सरकार यदि कोई त्रुटि हुई हो, तो उसे सुधारे और याचिकाकर्ता तथा समान परिस्थिति वाले अन्य आईपीएस अधिकारियों द्वारा प्रस्तुत अभ्यावेदनों पर उपयुक्त आदेश पारित करे ताकि उन्हें नवगठित मध्य प्रदेश राज्य में बनाए रखा जा सके। याचिकाकर्ता ने बिना किसी आपत्ति या प्रतिरोध के और अन्य कोई वैकल्पिक उपचार का प्रयोग करे बिना, पुनः भारत सरकार के समक्ष अभ्यावेदन प्रस्तुत किया और केवल तब, जब भारत सरकार ने दिनांक 16/06/2005 एवं 27/06/2005 को उसके विरुद्ध तथा अन्य समान परिस्थिति वाले अधिकारियों के विरुद्ध प्रतिकूल आदेश पारित किए, याचिकाकर्ता ने इस न्यायालय में सीधे उस आदेश को चुनौती देने हेतु रिट याचिका में संशोधन हेतु आवेदन प्रस्तुत किया।

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

9. यद्यपि उपर्युक्त घटनाक्रम इस मामले के तथ्यों की स्थिति है, श्री मनीन्द्र श्रीवास्तव ने अपनी सामान्य दृढ़ता और प्रबलता के साथ यह तर्क प्रस्तुत किया कि अधिकरण को भारत सरकार के अनुरोध को स्वीकार नहीं करना चाहिए था; बल्कि स्वयं ही याचिकाकर्ता के दावे पर गुण-दोष के आधार पर विचार करना चाहिए था। श्री मनीन्द्र श्रीवास्तव ने न्यायालय को यह भी समझाने का प्रयास किया कि इस विलंबित समय पर याचिकाकर्ता को अधिकरण के समक्ष वैधानिक उपाय अपनाने का निर्देश देना अन्यायपूर्ण होगा।

10. इसके विपरीत, भारत सरकार एवं छत्तीसगढ़ राज्य की ओर से प्रस्तुत माननीय स्थायी अधिवक्ता का यह तर्क है कि इस न्यायालय के लिए इस विवाद का न्यायनिर्णयन करने का कोई औचित्य नहीं बनता; प्रथम दृष्टया, जैसा कि माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **एल. चंद्र कुमार (पूर्वोक्त [1])** मामले के निर्णय के कंडिका 99 में प्रतिपादित किया गया है, याचिकाकर्ता को पहले अधिकरण के समक्ष उपलब्ध वैधानिक उपचारों का पूर्णतः उपयोग करना चाहिए और केवल उसके पश्चात ही वह संविधान के अनुच्छेद 226/227 के अधीन इस न्यायालय के समक्ष आ सकता है।

11. हमें श्री मनीन्द्र श्रीवास्तव की प्रथम आपत्ति में कोई औचित्य प्रतीत नहीं होता। यह उल्लेख करना आवश्यक है कि जब अधिकरण ने याचिकाकर्ता द्वारा दायर ओ.ए. क्रमांक 2421/2001 का निराकरण करते हुए भारत सरकार को निर्देश दिया कि वह याचिकाकर्ता एवं अन्य समान परिस्थिति वाले आईपीएस अधिकारियों द्वारा प्रस्तुत अभ्यावेदनों पर उपयुक्त आदेश पारित करे, तब याचिकाकर्ता ने कोई आपत्ति नहीं की थी। यह मान भी लिया जाए कि याचिकाकर्ता ने अधिकरण के समक्ष इस विषय पर आपत्ति उठाई थी और अधिकरण से विषय पर गुण-दोष के आधार पर निर्णय देने का अनुरोध किया गया था, तथा अधिकरण ने ऐसा करने से इंकार कर दिया था, तब भी याचिकाकर्ता को तत्काल बिना विलंब के, अधिकरण के आदेश की वैधता को इस न्यायालय में चुनौती देनी चाहिए थी और इस न्यायालय से यह परमादेश प्राप्त करना चाहिए था कि उक्त विषय पर गुण-दोष के आधार पर निर्णय किया जाए, न कि मामले को पुनः भारत सरकार को भेजा जाए। परंतु, अधिकरण के आदेश के अनुसार ऐसी कोई आपत्ति नहीं दर्शायी गई है। दूसरा कि, अधिकरण के आदेश के पारित होने के बाद भी याचिकाकर्ता ने पुनः भारत सरकार के समक्ष अभ्यावेदन प्रस्तुत किया और वह अपने अभ्यावेदन पर आदेश पारित करने हेतु अनुरोध करता रहा। हमें इस बात पर विचार करने की कोई आवश्यकता नहीं है कि भारत सरकार द्वारा दिनांक 04/04/2005 एवं 16/06/2005 को पारित आदेश वैध एवं न्यायसंगत हैं या नहीं। केवल यह कहना पर्याप्त है कि यह आदेश भारत सरकार द्वारा अधिकरण के पूर्ववर्ती निर्देशों के अनुपालन में पारित किए गए हैं। अधिकरण को अब तक इन दोनों आदेशों के गुण-दोष पर विचार करने का कोई अवसर प्राप्त नहीं हुआ है। ऐसा नहीं है कि भारत सरकार अथवा अधिकरण ने इस न्यायालय द्वारा बार-बार जारी परमादेश के बावजूद याचिकाकर्ता के विरुद्ध जानबूझकर और उद्दंडता से प्रतिकूल आदेश पारित किए हों, जिससे अनुच्छेद 226 के अधीन इस न्यायालय द्वारा निहित विवेकाधीन अधिकार के प्रयोग की आवश्यकता उत्पन्न हो कि याचिकाकर्ता को वैकल्पिक उपचार का प्रयोग करे बिना सीधे इस न्यायालय में आने की अनुमति दी जाए। यदि उपर्युक्त दोनों आदेश किसी वैध आधार पर अवैध या अमान्य हैं, तो याचिकाकर्ता को अधिकरण के समक्ष वैधानिक उपचार अपनाने का पूर्ण अधिकार है। अधिकरण के पास वह सभी शक्तियाँ एवं अधिकारिता हैं जिनके द्वारा वह इस न्यायालय के समक्ष मांगी गई राहत प्रदान कर सकता है। हमें ऐसा कोई असाधारण या गंभीर परिस्थिति नहीं दिखती, जिसके कारण याचिकाकर्ता को

WebCopy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

सीधे इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत होकर उपर्युक्त दो आदेशों की वैधता और सत्यता को चुनौती देने की अनुमति दी जाए। ऐसा भी नहीं है कि उपर्युक्त दोनों आदेश दशकों पूर्व पारित किए गए हों। ये आपेक्षित आदेश वर्ष 2005 में पारित हुए थे। हम यह मानते हैं कि न्यायहित में यही उपयुक्त होगा कि क्षेत्राधीन अधिकरण को निर्देशित किया जाए कि यदि याचिकाकर्ता मूल आवेदन प्रस्तुत करता है, तो अधिकरण उसे निर्धारित समयावधि में निराकृत करे।

12. परिणामस्वरूप एवं उपर्युक्त कारणों के आधार पर, यह रिट याचिका खारिज की जाती है, तथापि याचिकाकर्ता को यह स्वतंत्रता सुरक्षित रहती है कि वह क्षेत्राधीन अधिकरण के समक्ष वैधानिक उपचार का प्रयोग करे। यदि याचिकाकर्ता आज से एक माह की अवधि के भीतर मूल आवेदन प्रस्तुत करता है, तो क्षेत्राधीन अधिकरण को निर्देशित किया जाता है कि वह ऐसे मूल आवेदन के प्रस्तुत किए जाने की तिथि से छह माह की अवधि के भीतर, परिसीमा का संदर्भ लिए बिना, उसका निराकरण करे। इस रिट याचिका में संबंधित पक्षकारों द्वारा उठाए गए सभी तर्क एवं आपत्तियाँ, अधिकरण के समक्ष विचार एवं निर्णय हेतु यथावत् छोड़ी जाती हैं।

प्रकरण की परिस्थितियों एवं तथ्यों को दृष्टिगत रखते हुए, उभय पक्षकार स्वयं वाद व्यय वहन करेंगे।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

हस्ताक्षरित **हस्ताक्षरित**

मुख्य न्यायाधीश वी.के. श्रीवास्तव

न्यायाधीश

अस्वीकरणः हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयीन एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरूप ही अभिसाबित माना जाएगा एवं कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।

Translated by Soumitra Kesharwani, Advocate

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur